भारत को एक सूत्र में बांधने में स्वामी दयानंद का योगदान और बलिदान

आर्य समाज के संस्थापाक स्वामी दयानंद सरस्वती जी अपने समय के एक विलक्षण समाज सुधारक थे। संसार के महापुरुषों के जीवनों का अवलोकन करने से पता चलता है कि वह सब साममयिक परिस्थितियों से प्रभावित थे। इन सामयिक परिस्थितियों के कारण ही उन्होंने अपने मंतव्यों तथा सिद्धांतों के लिए कोई भी परिस्थिति आने पर कोई समझौता नहीं किया। जहाँ तक स्वामी जी का प्रश्न है, स्वामी जी तो किसी भी प्रकार के समझौते के पक्षधर ही नहीं थे, वह केवल अपने सिद्धांतों के साथ ही आगे बढ़ना चाहते थे। इतना ही नहीं उन्होंने कभी इस प्रकार के समझौते के लिए किसी प्रकार की कोई गुंजाइश ही नहीं छोड़ी।

इस सब के अतिरिक्त स्वामी जी ने अपने विचारों और धर्म को सदैव अलग ही रहने दिया। कभी विचारों और धर्म, का मिश्रण नहीं होने दिया। इसके साथ ही अन्य गुरुओं की भाँति गुरु, पैगम्बर या पीर बनने की भी कभी न तो इच्छा ही की और न ही प्रयास तक ही किया। जिन वैदिक मान्यताओं को ब्रह्मा से जैमिनी पर्यंत माना गया, उन्हीं मानयाताओं को ही स्वामी जी ने अपनाया। इस त्याग भावना ने ही स्वामी जी को ऋषियत्व ही नहीं महर्षियत्व का स्थान प्रदान किया गया।

स्वामीजी ने कभी स्वयं को ऊँचा दिखाने का प्रयास तक भी नहीं किया किन्तु स्वलिखित जीवन चरित के माध्यम से अपना जो अल्प सा परिचय दिया है, उस अपने आत्म परिचय में आपने बताया है कि “मेरा जन्म मच्छकान्टा नदी के किनारे मौरवी राज्य के एक कस्बे में ओदिच्य ब्राहमण कुल में संवत् १८८१ में हुआ। मेरे पिता की पुष्कल भूमिहारी थी। उनको मोरवी राज्य से अधिकार मिले थे। वे अच्छे सत्ताधारी थे और प्रबंध स्थिर रखने के लिए कुछ सैनिक भी रखते थे। पंडित लेखराम जी ने भी काठियावाड़ के मोरवी को ही ऋषि का जन्म स्थान,आना है तो देवेन्द्र मुखोपाध्याय जी ने मोरवी के टंकारा गाँव को स्वामी जी का जन्म स्थान माना है। पंडित युधिष्ठिर मीमांसक जी ने “ऋषि दयानंद जी के पिता का नाम कर्सन जी ही लिखा है और जन्म स्थान भी टंकारा का जीवापुर मुहल्ला वर्णित किया है।” इन सब के विचारों को जब हम संगृहीत करते हैं तो हम पाते हैं कि मोरवी में ही एक गाँव टंकारा नाम से है और टंकारा गाँव में ही एक मोहल्ले का नाम जीवापुर भी ही है। इस प्रकार इन सब के विचारों में शब्द भिन्नता होने पर भी मत एक ही निकलता है।

इस प्रकार इस परिवार में जन्मे बालक का नाम मूलशंकर रखा गया और इन्हें मूल जी के नाम से घर पर

बुलाया जाने लगा। समय आने पर उन्हें देवनागरी शब्दों का ज्ञान कराना आरम्भ किया गया। आठवें वर्ष यज्ञोपवीत संस्कार हुआ तथा शिवभक्त बना कर चोदह वर्ष की आयु में शिव पूजन तथा जगराता के लिए शिवरात्रि के व्रत के लिए माता के विरोध की चिंता किये बिना उन्हें जगराते के लिए शिव मंदिर में ले जाया गया। रात्रि के दूसरे पहर तक मूलशंकर के पिता सहित सब भक्त लोग सो गए। इस शांत वातावरण में कुछ चूहे वहां आकर उछल कूद करते हुए कभी मूर्ति पर चढते और कभी शिव पर चढ़ाए गए प्रसाद में मुंह मारते। इस प्रकार सब और गंदगी फैला रहे इन चूहों को देखकर मूल जी को अनुभव हुआ कि यह पत्थर का शिव कभी भगवान् नहीं हो सकता। जो शिव इन छोटे छोटे चूहों से अपनी स्वयं की ही रक्षा नहीं कर सकता, वह शिव भगवान् कैसे हो सकता है ? इतना विचार आते ही मूल जी वहां से उठकर घर चले गए और घर पर जाकर भोजन करके व्रत त्याग दिया।

अभी यह बालक अंधविश्वास से दूर होकर सच्चे शिव की ख़ोज में जुटा ही था कि एक दिन उसकी छोटी बहिन की मृत्यु हो गई। इस बात से उन्हें बहुत दु :ख हुआ। इस घटना से इस बालक का मन वैराग्य की और बढ़ गया। अभी वैराग्य का विचार ही हो रहा था कि फिर एक दिन इनके प्रिय चाचा जी की भी मृत्यु हो गयी। अठारह वर्षीय मूल जी मृत्यु से छुटकारे का मार्ग ढूँढने लगे किन्तु उन्हें कोई मार्ग नहीं मिल पा रहा था। माता पिता ने बालक की जब यह अवस्था देखी तो उसके विवाह करने का निर्णय ले लिया। उनका विवाह हो पाता इससे पूर्व ही मूला जी घर त्याग कर चले गए, पिटा ने एक बार इन्हें पकड़ भी लिया किन्तु अवसर पाकर फिर से ऐसा भागे कि फिर कभी परिवार के किसी भी व्यक्ति के हाथ नहीं आये। इन दिनों वह स्वार्थी साधू लोगों के हाथों लुटते रहे। साधुओं ने उनका नाम बदल कर शुद्ध चैतन्य रख दिया किन्तु कोई भी साधू उन्हें संन्यास देने को तैयार नहीं हुआ। अंत में स्वामी पूर्णानंद जी ने उनका परीक्षण किया और संन्यास के योग्य पाकर एक दक्षिणी ब्राहमण से उन्हें संन्यास की दीक्षा दिलवा कर उन्हें नया नाम दयानंद दिया गया। अब स्वामी जी गुरु विरजानंद दंडी जी के दर्शनार्थ चल दिए। उन्हें ढू ंढते हुए अंत में संवत् १९१६ को मथुरा पहुंचे। यहाँ गुरु चरणों में रहते हुए स्वामी जी ने व्याकरण तथा आर्ष ग्रंथों का अध्ययन किया। इस समय तक स्वामी जी की आयु ३५ वर्ष की हो चुकी थी।

दंडी गुरु की कुटिया छोड़ते समय गुरु दक्षिणा का समय आया स्वामी जी ने लौंग प्रस्तुत किये। इस पर गुरु जी ने कहा कि " इस परम पुनीत जगत्गुरू भारत की और दृष्टि उठाओ ! जो समस्त संसार का गुरु आज वह विद्या विहीन होकर ईश्वरीय ज्ञान वेद के नाम तक को भी भूल चुका है ..... अत : वेद के सूर्य का प्रकाश करके मनुष्य मात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करो। मित्थ्या विश्वासों को दूर करो।"

यहाँ से गुरु का आशीर्वाद लेकर वैशाख संवत् १९२० तदनुसार अप्रैल १९६३ को मथुरा से चलकर आगरा में सेठ गुल्लामल जी के बाग़ में ठहरे। आपके प्रभाव से यहाँ कुछ लोगों ने मूर्तिपूजा को त्याग दिया। यहाँ से आपने देश भ्रमण करते हुए देश की अवस्था का पूर्ण ज्ञानप्राप्त किया तथा वेद की खोज में १८६५ ईस्वी में धौलपुर, फिर वहां से माघ वदी १२ सम्वत् १९२१ में ग्वालियर गए, जहाँ राजा के संदेश्वाहक को बताया कि भागवत महात्म्य का फ़ल कष्ट क्लेश के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। १२ मार्च १८६७ में हरिद्वार के भीम गौडा में पाखण्ड खंडिनी पताका लहरा कर यहाँ से अनेक व्याख्यान दिए तथा शास्त्रार्थ भी किये। इस मध्य स्वामी जी जहाँ भी गए, वहां उनके व्याख्यान होते रहे। इस मध्य अनेक स्थानों पर स्वामी जी को मारने का प्रयास किया गया किन्तु षडयंत्रकारियों को सफलता नहीं मिली। इस प्रकार देश की अवस्था का अवलोकन कर स्वामी जी कार्य क्षेत्र मे उतरे।

सर्वत्र स्वामी जी अंधविश्वास, रुढियों, कुरीतियों के विरोध में व्याख्यान देने लगे। इन व्याख्यानों से स्वामी जी के जहाँ भक्तों की संख्या में वृद्धि हुई, वहां विरोधियों की संख्या भी निरंतर बढती ही चली गई। अनेक बार बम्बई गए किन्तु तीसरी बार जाने पर लोगों ने सत्संग संस्था स्थापित करने की इच्छा प्रकट की। लोगों की इच्छानुसार सत्संग सभा की स्थापना की गई और इस सत्संग सभा का नाम आर्य समाज रखा गया। इसकी स्थापना सन् १८७५ ईस्वी में नए संवत् के दिन बंबई के काकडवाडी नामक क्षेत्र में की गई। आरम्भ में इस सभा के पच्चीस सदस्य बनाए गए। इससे पूर्व सत्यार्थ प्रकाश भी प्रकाशन के लिए प्रैस में दिया जा चुका था।

स्वामी जी के मुख्य कार्य :

स्वामी जी ने देशांटन कर जिन रुढियों, कुरीतियों तथा अंधविश्वासों की खोज की थी, जो जो सामाजिक, धार्मिक तथा राष्ट्रीय कमियां देशांटन के समय देश में स्वामी जी को दिखाई दीं, स्वामी जी ने उन कमियों को दूर करने के लिए बड़े जोर से अभियान आरम्भ कर दिया स्वामी जी ही नहीं पूरे का पूरा आर्य समाज भी उनके इस अभियान का अंग बन गया। इस प्रकार समाज के सुधार, जाति के कल्याण तथा देश के उत्थान के लिए स्वामी जी और उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज ने अनेक कार्य किये।

यथा : वेद की और लौटो – स्वामी जी ने कहा कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है। यह ज्ञान परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में प्राणी मात्र के कल्याण के लिए दिया था। इस समय तक लोगों को वेद से दूर करने के लिए अनेक अनर्गल ग्रन्थ बन चुके हैं। स्वामी जी ने इन मित्थ्या ग्रन्थों का विरोध करते हुए वेद का सत्य ज्ञान सबके सामने रखा और कहा कि यह ज्ञान ही कल्याण का मूल साधन है। इस ज्ञान के आधार पर ही चलो,यह ज्ञान ही सबके कल्याण का साधन है और सुख देने वाला है। इस पर चलने के लिए इस ज्ञान की और एक बार फिर से लौटो।

नारी की दशा :

स्वामी जी ने देखा कि इस समय तक नारी की दशा अबला नारी के रूप में स्थापित हो चुकी है। इस कारण इस समय नारी को कहीं भी कोई सम्मान नहीं मिल रहा। स्वामी जी ने नारी की दशा को सुधाराने का निर्णय लिया और कहा कि नारी अर्थात् माता निर्माण करने का कार्य करती है। इसलिए नारी का सुशीक्षित होना आवश्यक है। नारी की शिक्षा के जो दरवाजे वर्षों से बंद हो चुके थे, स्वामी जी ने इन कपाटो को नारियों के लिए खोलते हुए कन्या विद्यालय आरम्भ किये। लोगों ने जो इस कार्य के लिए स्वामी जी का विरोध किया, स्वामी जी ने उस विरोध आदि की किसी भी प्रकार से चिंता किये बिना अपना स्त्री शिक्षा का कार्य चालू रखा। इस सब का यह परिणाम है कि आज उच्च शिक्षा ही नहीं प्राप्त कर रहीं अपितु उच्च पदों पर भी आसीन हो गईं है। परिणाम यहाँ तक आये हैं कि जो लोग, जो संस्थाएं उस समय नारी शिक्षा का विरोध कर रहीं थीं, वह भी आज नारी शिक्षा के बड़े बड़े केंद्र खोले हुए हैं।

उस समय नारी के तीन घातक शत्रु बने हुए थे। यह थे बाल विवाह, बहु विवाह और सती प्रथा। इन तीन शत्रुओं के साथ ही साथ पर्दा प्रथा, ने भी नारी से पूरी शत्रुता निभाते हुए इस नारी को पाँव की जूती बना दिया था। बाल विवाह के कारण छोटी आयु में ही वह विधवा हो जाती थीं। सती प्रथा के अंतर्गत

नारी को पति की मृत्यु पर उसे पति के साथ ही जलना होता था। स्वामी जी ने इन सब बुराइयों के विरोध में अपनी बुलंद आवाज को उठाया तथा नारी की रक्षा के लिए इन कुरीतियों को दूर करने के लिए भीषण शंखनाद किया। इस सबका ही परिणाम था कि उनका यह प्रयास धीरे धीरे रंग लाया और आज नारी इन कुरीतियों से बच चुकी है। आज तो नारी अपने परिवार की अधिष्ठात्री बन गई है। इसके साथ ही हम देखते हैं कि देश के सब कार्यालय नारियों के लिए व्यवसाय के रूप में खुल गए हैं।

दलितोद्धार

इस समय दलितों की अवस्था भी नारी की ही भाँति अधोगति को प्राप्त हो चुकी थी। इस जाति से सम्बंधित लोगों को साधारण से नागरिक अधिकार भी प्राप्त नहीं थे। यह लोग सार्वजनिक कुओं अथवा नल से पानी तक भी लेने का अधिकार नहीं रखते थे। समाज व्यवस्था के अनुसार जिन लोगों को सेवा का कार्य सोम्पा गया था, आज उन से हो रहा बुरा व्यवहार स्वामी जी नहीं देख पा रहे थे, इससे वह अत्यंत व्यथित थे। स्वामीजीने कहा कि ऋषियों ने कर्म के आधार पर जाति व्यवस्था बनाई थी। इस व्यवस्था में जन्म कोई आधार नहीं था। इसलिए इन्हें भी ऊपर उठने का, उन्नति करने का अन्य जातियों के ही समान अधिकार है। यदि यह लोग उच्च शिक्षा पा लेते हैं तो उस योग्यता के कारण वह भी वैसी ही योग्यता वालों के समान कार्य तथा व्यवसाय प्राप्त करने के अधिकारी हैं। इस प्रकार स्वामी जी ने छुआछूत के विरोध में आवाज उठाई। इस का ही परिणाम है कि आर्य समाज में उन दलितों को भी पुरोहित बनाकर पंडित के सर्वोच्च पद पर पहुँचा दिया, जिन्होंने इस पद की शिक्षा प्राप्त की थी। आज तो विश्व भर में दलितों को समान नागरिक अधिकार मिल चुके हैं।

भाषा का प्रश्न

स्वामी जी का मानना था कि हमारी संस्कृति का मूल वेद तथा इसके सहायक व व्याख्या ग्रन्थ हैं। उपनिषद् तथा वेद के व्याख्या ग्रन्थ ब्राह्मण तथा दर्शन आदि ग्रन्थ सब कुछ संस्कृत में होने के कारण हमें अपने मूल से जुड़े रहने के के लिए संस्कृत का ज्ञान होना आवश्यक है।

हिंदी हमारी जनभाषा है। देश के प्रत्येक छोर में हिंदी समझी जाती है। इस कारण हिंदी में देश को एक सूत्र में बांधने की शक्ति है, इसलिए देश का सब काम और व्यवहार हिंदी में ही करना उपयुक्त है। यह राष्ट्रीय एकता की प्रतीक भी है। इसलिए स्वामी जी ने अधिकाधिक हिंदी का प्रयोग करने के लिए आह्वान् किया। स्वामी जी ने आर्य समाज का सब कार्य हिंदी में ही करने का आदेश भी दिया। स्वामी जी ने तो हिन्दी के प्रयोग के लिए यहाँ तक कहा कि जिसने मेरा सत्यार्थ प्रकाश पढ़ना है, वह हिंदी सीखे।

गौ रक्षा का प्रश्न

आर्य लोग प्राचीन काल से ही अपनी आर्थिक सम्पन्नता का आधार गाय को ही मानते चले आ रहे हैं और उस व्यक्ति को धनवान् माना गया, जिसके पास गाय धन की संख्या अधिक होती है। गाय हमारी कृषि का भी आधार है, गाय का दूध, घी, गोबर, मूत्र और यहाँ तक कि इसके दहीं, छाछ आदि भी अनेक रोगों के निदान का कारण होते हैं। फिर हमारी यह गाय इस प्रकार हमारी सेवा और पालन करती है,जिस प्रकार एक मां अपनी संतान का करती है। एक गाय अपने जीवन में हजारों लोगों की रक्षा करती है। इस लिए गाय की रक्षा के लिए स्वामी जी ने बड़े जोर से नाद लगाया। इसकी रक्षा के लिए लाखों लोगों के

हस्ताक्षर भी करवा कर सरकार को दिए।

शुद्धि

मुसलमानों और ईसाइयों के इस देश में आगमन के पश्चात् यहाँ के मूल निवासियों को ब्लात मुसलमान और ईसाई बनाने का जो क्रम आरम्भ हुआ, उससे जाति को बहुत हानि हो रही थी। इस प्रकार ब्लात रूप से विधर्मी बनाए गए लोगों को स्वामी जी ने पुन : उन्हें उनकी माता की गोद देने का निर्णय लिया। इससे आर्य जाति को एक नया बल मिला।

स्वाधीनता का प्रश्न

स्वामी जी स्वाधीनता के सच्चे अर्थों में पुजारी थे। वह सुराज्य को स्वस्देशी राज्य का स्थानापन्न नहीं स्वीकार करते थे। उनका मानना था कि एक सर्वोत्तम विदेशी सरकार भी अत्यंत घटिया स्वदेशी सरकार से भी कभी अच्छी नहीं हो सकती। वह पूर्ण स्वाधीनता के पक्षधर थे।

ऋषि की मान्यताएं

स्वामी जी वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानते थे। वह ईश्वर को सर्वशक्तिमान मानते हुए निराकार मानते थे। त्रैतवाद के पक्षधर स्वामी जी यज्ञ को अत्यंत उत्तम मानते हुए यज्ञ को प्रतिदिन करने के लिए प्रेरित करते थे। वह जातिवाद के पक्षधर न होकर वर्णाश्रम व्यवस्था को पसंद करते थे। स्वामी जी का पुनर्जन्म में विश्वास था। वह तिलक, जनेऊ(यज्ञोपवीत) आदि को धर्म का केवल बाहरी स्वरूप मानते थे। अंधविश्वास तथा कुरीतियों से बचने के लिए प्रेरणा देते थे। ईश्वर कभी जन्म नहीं लेता, इस कारण ईश्वर का कभी अवतार भी नहीं होता। वह वेदाधारित उपनिषद्, ब्राह्मण, अरण्यक, स्मृति तथा सूत्र ग्रन्थों को आर्ष ग्रन्थ मानते थे तथा इनका पढ़ना प्रत्येक आर्य के लिए आवश्यक मानते थे।

स्वामी जी जादू, टोना, चshashमत्कार, तीर्थ आदि के पक्ष में नहीं थे। जीवित माता पिता की श्रद्धा arthaat अर्थात् श्राद्ध के पक्षधर थे किन्तु मृतक शाद्ध को पसंद नहीं करते थे। स्वामी जी मुहूर्त पर भी विश्वास नहीं करते थे तथा सुखी जीवन को स्वर्ग और दु :खी जीवन को नरक मानते थे। शाकाहारी भोजन के पक्ष में थे। राशिफल तथा फलित ज्योतिष को तो कतई पसंद नहीं करते थे।

इस प्रकार समय की बह रही धारा के उलट चलते हुए स्वामी जी को अनेक पेट पंथियों तथा अंध विश्वासियों ने पसंद नहीं किया। इस कारण इन स्वार्थियों ने स्वामी जी को अपने मार्ग से हटाने के लिए उनके जीवन में लगभग सत्रह बार विष दिया, उनके ऊपर बड़े बड़े पत्थर फैंके, नदी में डुबोने का प्रयास किया, उन पर जीवित सांप तक फैंके गए, किन्तु मस्त हाथी की चाल चलने वाले स्वामी दयानंद ने इन सब को फूल समझते हुए सहन किया। किसी प्रकार की चिंता किये बिना समाज के कल्याण और उत्थान के कार्यों में लगे रहे। अंत में यह विष ही उनकी मृत्यु का कारण बना, जो जोधपुर में उनके रसोइये घूड मिश्र को अपने साथ मिला कर धूर्तों ने दूध में विष मिलाकर स्वामी जी को दिया गया। इस तीव्र विष के ।तीव्र प्रभाव से स्वामी जी का पूरा शरीर छलनी के समान हो गया। इस सबके परिणाम स्वरूप स्वामी जी दीपावली के दिन सन् १८८३ ईस्वी को भिनाये की कोठी अजमेर नगर में इस संसार को यहीं छोड़कर सदा के लिए विदा हो गए।

स्वामी जी का यह बलिदान आर्यों के लिए एक प्रेरणा स्रोत बन गया। इस प्रेरणा के आधार पर आर्यों में

बलिदान की एक कभी न समाप्त होने वाली लम्बी श्रृंखला आरम्भ हो गई। हैदराबाद का सत्या गृह हो, या स्वाधीनता की लड़ाई, हिंदी का प्रश्न हो या गोरक्षा का, सत्यार्थ प्रकाश का प्रश्न हो या फिर सार्वजनिक जीवन में सब को सन्मार्ग दिखाने का, जहाँ भी मातृभूमि ने बलि मांगी आर्य लोग अपनी छाती तान कर खाडे हो गए और सर कटवाने से कभी पीछे नहीं हटे। यह ही कारण है कि आर्य समाज ही विश्व की एक मात्र इस प्रकर की संस्था है, जिस ने अपने लगभग सवा सो वर्ष के इस अल्प काल में बलिदानियों की इतनी लम्बी सूचि तैयार कर दी कि जिसके समकक्ष फिर पूरे विश्व में कोई अन्य संस्था नहीं आ सकी।

डॉ. अशोक आर्य
पॉकेट १/ ६१ रामप्रस्थ ग्रीन से, ७ वैशाली
२०१०१२ गाजियाबाद उ. प्र. भारत
चलभाष ९३५ ४८ ४५ ४२६ e mail ashokarya1944@rediffmail.com